कर्मकाण्डशिरोमणि प. श्यामलालज्ञतूकृत

अधिमास-निर्णय

THE ADHIMĀSA-NIRṆAYA

by

Karmakāṇḍa-Śiromaṇi Pt. Shyam Lal Jatoo

Edited & Translated by:-

Dr. Sushma Z. Jatoo

Sh. Rajendra Jatoo

Dr. Sudhir Kumar Lall

कर्मकाण्डशिरोमणि प. श्यामलालजतूकृत

अधिमास-निर्णय

THE ADHIMĀSA-NIRṆAYA

(THE INTER-CALARY MONTH : AN APPRAISAL)

by

Karmakāṇḍa-Śiromaṇi Pt. Shyam Lal Jatoo

Edited & Translated

by

Dr. Sushma Z. Jatoo

Sh. Rajendra Jatoo

Dr. Sudhir Kumar Lall

Can be had from :
99 - Sadbhawna Apartments
Plot No. 13
I. P. Extension
Delhi - 110092
Tel No. 011-2726398
E-mail - jattoo @ indiatimes.com

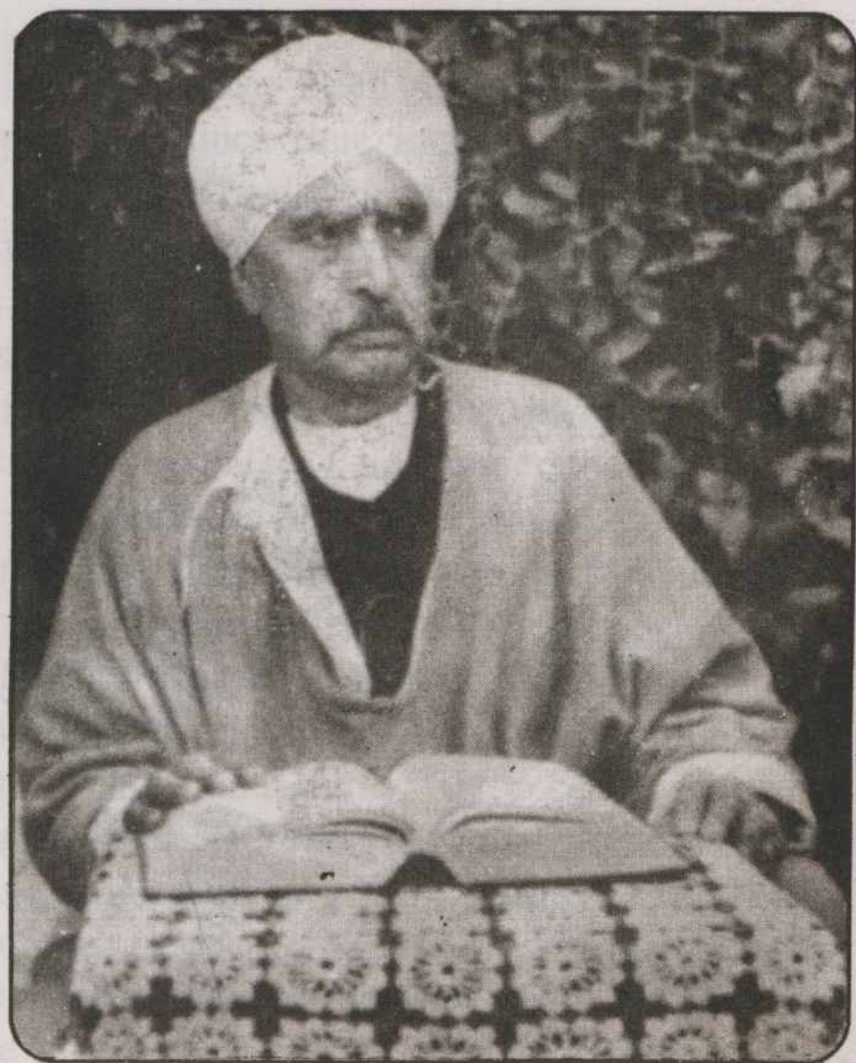
First Edition- 2002
Copies- 1000

प्रकाशक :
परममित्र प्रकाशन
डी-पॉकेट, 214 दिलशाद गार्डन, दिल्ली-110095
टेलीफोन : (011) 3917538, 2295900
E-mail - PM Prakashan @Yahoo.com

मूल्य : 50/- USD 5

ISBN 81-85970-46-7

Laser Typsetting :
P.M COMPUTERS
5818/6, New Chandrawal, Jawahar Nagar,
Delhi-110007, Phone : 3917538, 2295900



KARMAKĀṆḌĀCĀRYA PT. SHYAM LAL JATOO
(19th Dec. 1899 - 17 Dec. 1995)

Foreword

Vedas have been a perennial source of our inspirations since time immemorial. The roots of all the disciplines owe their existence to them. The corpus of vedic literature provided a strong foundation to all the arts and sciences. Astrology stands no exception to this. It is noteworthy that astrology is enumerated as an important constituent of the *vedāṅgas* or the subjects necessary to be read and understood to comprehend the vedas holistically. There evolved a great system of astronomy and astrology which was nurtured by a number of great masters of these sciences. They along with other aspects pondered over the factor of 'Time' as well. They classified 'Time' as *sūkṣma ghaṭi, parā ghaṭi, vighaṭi* and *ghaṭis*. Sixty *ghaṭis* make one *tithi* or a day and 30 *(tithis)* days make one *(māsa)* month, 12 months result in a *(saṁvatsara)* year, which could be of two types *(saura saṁvatsara)* the solar year and *(cāndra saṁvatsara)* the lunar year. A solar year is the time taken by the earth for one revolution round the sun and a lunar year is calculated by twelve lunations. (Lunation is the interval of the time between two consecutive conjunctions of the sun and the moon.) There is a difference of about eleven days in both of them. This excess of a solar year over the lunar year is called *'adhimāsa'* or inter-calary month. This lunar month *(adhimāsa)* occurs after every two years, eight months, sixteen days and four *ghaṭis*. In the present manuscript the author Pt. Shyam Lal Jatoo has concentrated on the said subject, as observed by the Kashmiri Pandits, in particular and practising priests,

in general. The origin of the *malamāsa* and also the *bhānumāsa* as per the prevalent mythological and astrological traditions have been discussed in detail.

Working on the manuscripts is an interesting assignment, specially if the manuscript has been codified by one's grandfather. It is a matter of great honour and privilege for us to have got a chance of working on the above-mentioned manuscript which was painstakingly well preserved by author's son, who is our revered father Pt. Nand Lal Jatoo.

We are grateful to Pt. Radha Krishna Zadoo for his invaluable scholarly guidance. This endeavour would have been incomplete but for the scholarly inputs from Dr. Sudhir Kumar Lall. We are thankful to our children, Pragya and Pranavi without whose co-operation the job would have been incomplete. Lastly, we thank Dr. R. N. Pandey of Paramamitra Publications for bringing it out neatly and expeditiously.

Rajendra Jatoo
Sushma Z. Jatoo
4th January, 2002

Life-Sketch

Pt. Shyam Lal Jatoo, endearingly known as 'Lal Sahib', was born on 19th December, 1899, at Kanikadal, Srinagar, Kashmir. His father Shri Narayan Jatoo was a famous preceptor of rituals and a devout Saraswat Brahman. Lal Sahib was initiated to primary ritualistic education by his learned father. He received his formal education from Government High School, Bagh-i-Dilawar Khan, Srinagar, Kashmir. He passed *Prājña* (Dexterity in Sanskrit) examination in 1917, from Punjab University, Lahore. In 1921, he qualified the *Viśārada* examination and got himself admitted in the *Śāstrī* programme, under the guidance of the then famous Pandit and Sanskritist Shri Nath Kak Shastri.

As he treaded along the path of worldly pursuits, the rituals practised by his father always followed him and finally beckoned him to carve a niche for himself in the field of *karma-kāṇḍa* and vedic studies. His intellectual quest of studying Kashmir Śaivism in depth, took him to the great scholar Pt. Hara Bhatt Shastri. Under his guidance, he studied important *Śaivāgamas* like *Śivasūtra*, *Paramārtha-Sāra, Īśvara-pratyabhijñā, Tantrāloka, Parātriṁśikā* and *Mālinī-Vijayottara-tantra*.

Swami Ishwara Swarupa ji, popularly known as Swami Lakshman joo, renowned scholar and yogi of Kashmir Śaivism treated Lal Sahib as his religious guru, and used to relate to him as 'Shyam ji', reverentially. Swami ji used to narrate that once while performing a ritual he saw Lord Śiva dancing on the head of Lal

Sahib. This incident speaks of the special grace of Lord Śiva on him. Swami ji would always consult Lal Sahib for all the rituals, that were to be performed in his *āśrama*.

Lal Sahib was widely acclaimed for his acumen in the field of *karmakāṇḍa*. The title of *'Karmakāṇḍa Śiromaṇi'* (Epitome of rituals) was conferred upon him by famous Saint Nagpal for performing a *yajña* (sacrifice) at the temple of Kṣhīra Bhavānī (Tulamulla). His contribution to the field was duly acknowledged by the 'Karmakāṇḍa peetha' of Varanasi which bestowed him with the title 'Karmakāṇḍa Ācārya'. He also published a monograph titled *"Śri Vidyādhara-stava"* in 1953 eulogizing the great saint Swami Vidyadhara. Besides, he has also written extensively on various subjects.

In 1990, the terrorism in the Kashmir valley, gave rise to the mass exodus. Lal Sahib was no exception and he had to forcibly spend his last days in Jammu. The adversities of circumstances did not deter his zeal of writing. He always was a teacher and provided guidance and solutions to whosoever came to him. He attained his eternal samadhi on 17th December 1995 at Jammu.

CONTENTS

अधिमास-निर्णय

1) मलमास अति प्राचीन काल से चला आया है।
2) मलमास का उल्लेख वैदिक मन्त्रों तथा ब्राह्मणों में किया गया है।
3) मलमास का महत्त्व पुराणों में दिखलाया गया है।
4) मलमास का प्रकरण धर्मशास्त्रों में भी है।
5) मलमास की सिद्धि ज्योतिष शास्त्र द्वारा हुई है।
6) क्रियाकलाप (कर्मकाण्ड) के संबंध में मलमास की अत्यावश्यकता शास्त्रों में दर्शाई गई है।
7) धर्म, कर्म, आचार श्रद्धा-भक्ति सम्पन्न कश्मीरी सहित समस्त सनातन धर्म समाज पूर्णरूप से इसके अधिकारी हैं।

ज्योतिष के अनुसार मलमास अथवा एक ही मास होने पर ये दो मास प्राय: ढ़ाई वर्ष बीतने पर वर्ष से अधिक माने जाते हैं। इसको अधिमास भी कहा जाता है। इसका यह कारण है कि वर्ष बारह मासों से बनता है। ज्योतिष के नियमानुसार तेरहवां मास मलमास माना जाता है। यह किस तरह बनता है, इसी पर इस लेख में कुछ सूचनाएँ दी गई हैं। यह मलमास से पर्वात्मक समय का मल ही माना जाता है। इस कारण इस मास में सारी क्रियाएँ नहीं की जाती हैं, क्योंकि यह काल का यानि समय का मल माना जाता है। इस कारण शुभ क्रियाएँ नहीं की जातीं हैं। हाँ, इतनी बात रहती है कि इस मास में सूर्यक्षेत्र (मटन भवन) में पितरों का श्राद्ध आदि अथवा विष्णुबलि (द्वादशी) पितरों के लिए की जाती है।

हिन्दू जगत् का क्रियामार्ग प्रतिदिन लुप्त होता जा रहा है। इस समाज की प्रतिदिन इस क्रियामार्ग के प्रति श्रद्धा नष्ट होती जा रही है। जो ब्राह्मण इसको चलाने वाले थे उनका जीवन इस मार्ग को चलाने से कठिनतापूर्वक ही व्यतीत होता था। फलत: वे इस क्रियामार्ग

को छोड़कर अन्य मार्गानुयायी होने के लिए विवश हो गए। ऐसा करने से उनका कुछ उद्धार हो गया किन्तु इस क्रिया मार्ग का संहार पूर्ण रूप से होने लगा। इसलिए मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि क्रियामार्ग के बारे में यदि कुछ-कुछ सूचनाएँ, आदर्श रूप में रह जाएं तो संभव है कि कभी समय पर यदि और भी क्रियामार्ग की प्रवृत्ति बढ़ेगी तो यह आदर्श क्रिया उस समय लाभदायी बनेगी। इस आशय से इसको लिपिबद्ध किया जा रहा है।

मलमास का प्रादुर्भाव कब, कैसे हुआ, इसका इतिहास मार्त्तण्ड ब्राह्मण में और मार्त्तण्ड माहात्म्य में वर्णन किया गया है।

मार्त्तण्ड ब्राह्मण में -

तद्ब्राह्मणो यं ऋषिपुत्रः कश्यपस्येयं भार्या सा दक्षकन्या अदितया. ...... (इत्यादि से लेकर) तन्मलिम्लुचं मलिम्लुचया भीति..... (इस स्थल तक) समाप्त होता है। और मार्त्तण्ड माहात्म्य में इसका वर्णन आरम्भ होता है -

मार्त्ताण्डेति कथं नाम क्षेत्रस्यास्य विशेषतः ....(से लेकर) ये केचिन्मानुषे लोके (इस) ब्रह्मवाक्य तक मलमास की उत्पत्ति और इसकी महत्ता का वर्णन किया गया है। दोनों (मार्त्तण्ड ब्राह्मण और मार्त्तण्ड माहात्म्य) का विषय एक ही है जिसका इतिहास संक्षेप में यहाँ लिखा जाता है।

दक्ष मन्वन्तर में दक्ष प्रजापति की कन्या महर्षि कश्यप मुनि की पत्नी अदिति माता से 13 सन्तान उत्पन्न हुए। ये पहले अण्डों के रूप में उत्पन्न हुए। फिर उनमें से यानि 12 अण्डों से 12 सूर्य निकले जिनके अनुसार 12 मास, 6 ऋतु, 2 अयन अर्थात् दक्षिणायन तथा उत्तरायण और चन्द्रमा की ह्रास-वृद्धि आदि कालचक्र की रचना हुई।

तेरहवें अण्डे को विगलित अथवा क्षीणसत्त्व देखकर अदिति माता ने सतीसर में फेंक दिया। महर्षि कश्यप जी ने सतीसर को अपना आश्रम बनाना चाहा। उन्होंने ब्रह्मा, विष्णु व महेश्वर, इन तीनों

कारणों की आराधना की कि मेरा संकल्प पूर्ण हो जाए। विष्णु ने सतीसर का पश्चिम पर्वत अपने चक्र से काट डाला जिससे सतीसर का पानी बह निकला। समय बीतने पर सतीसर सूख गया और भूमि प्रकट हुई। फिर यहाँ कश्यप जी ने भारत के सारे तीर्थों की प्रतिष्ठा की। लोग यहाँ रहने लगे। सतीसर के किसी गहरे भू-भाग में पानी संचित रहा, जिसमें अदिति माता का फेंका हुआ अण्डा तैर रहा था।

महर्षि कश्यप ने अण्डे को देखा और उसको पकड़ना चाहा। पकड़ते ही अण्डा फूट गया और उसमें से एक महाज्वाला निकली, जो मार्त्तण्ड क्षेत्र पर विद्यमान पर्वत की चोटी से जा टकराई। इस ज्वाला का नाम भर्गशिखा पड़ा। भर्ग सूर्य भगवान् का नाम है। अपि च, भर्गशिखा देवी आज भी यहाँ स्थापित हैं। समय-समय पर लोग यहाँ देवी की पूजा करते हैं, बलि-उपहार चढ़ाते हैं, जिससे उन्हें मन की परम शान्ति मिलती है। इस समय मार्त्तण्ड क्षेत्र, मार्त्तण्ड, मटन और भवन के नाम से जाना जाता है। यह स्थान अनंतनाग से छः मील दूर पूर्वोत्तर दिशा में है। इस स्थान के आस-पास और भी तीर्थस्थान व देवस्थान हैं, जिनका विस्तृत उल्लेख मार्त्तण्ड माहात्म्य में किया गया है।

महर्षि कश्यप के वृत्तान्त में आगे बढ़ते हुए, उस अण्डे में जो शेष तेज-पुञ्ज रहा, उसका नाम मार्त्तण्ड पड़ा अर्थात् निसत्व अण्डे से निकला हुआ प्रकाशमान देवता। महर्षि कश्यप ने उस तेज-पुञ्ज (अर्थात् मार्त्तण्ड) को देखा और चकित होकर ब्रह्मा के शरण में आए। ब्रह्मा ने उनको सांत्वना दी और कहा, "हे पुत्र, आप चकित न हों। यह आपका ही पुत्र है".........इत्यादि।

फिर कश्यप जी ने ब्रह्मा से कहा, "मेरी बारह सन्तानें सारा कालचक्र चलाती हैं। अतः इस तेरहवीं सन्तान को भी ऐसा ही काम दीजिए।" इस विषय में ब्रह्मा ने विष्णु का स्मरण किया। ब्रह्मा का प्रश्न सुनकर विष्णु ने शंकर का स्मरण किया। शंकर ने विष्णु का

आशय समझकर कुछ निश्चय नहीं किया और कहा, "उन्हीं बारह सूर्यों से विमर्श करेंगे। सब देवों ने एकत्रित होकर बारह सूर्यों से जब इस विषय में पूछा, तब वे बोले, "नियति (शक्ति) ने समय माप कर हमारा कार्य निर्धारित किया है। चन्द्रमा सहित हम सब तदनुसार कालचक्र को चला रहे हैं। अब आप ही देखें कि किस प्रकार हमारे नियत समय में से कोई समय निकल सकता है अर्थात् हमारे कार्यक्रम में से यदि कोई अधिक समय निकल सके तो उसका अधिकारी इसी मार्त्तण्ड को बना दीजिए।"

अब यहाँ प्रमाण के लिए मार्त्तण्ड माहात्म्य के मूल श्लोक उद्धृत किए जा रहे हैं -

तदा प्रभृति तद्ब्रह्मसिद्धान्तदर्शनक्रमात् ।
सौरसंवत्सरस्यान्ते मासेन शशिजेन तु ॥
एकादशातिरिच्यन्ते दिनानि प्रतिवत्सरम् ।
वर्षद्वये चाष्टमासे दिनषोडशकान्विते ॥
नाडीचतुष्टयान्ते च यतत्येकोधिमासकः ।
चान्द्राश्चैत्रादयो मासा युक्तामेषादिसंक्रमैः ॥
संक्रान्तिरहितो मासो मलमासस्ततोऽधिकः ।
एवं विचार्य ब्रह्माद्या देवेन्द्राः कश्यपो तदा ॥
अब्रुवन्नधिमासेऽस्मिन्मार्त्तण्डमभिषिच्यताम् ।
चिरकालं यतोऽनेन भुक्ता सरसि यातनाम् ॥

उपर्युक्त श्लोकों का अर्थ -

फिर 12 सूर्यों के ऐसा कहने पर देवताओं ने ब्रह्मसिद्धान्त (ज्योतिष का सर्वप्रथम अतिप्राचीन सर्वमान्य ग्रन्थ) के आधार पर गणित द्वारा देखा कि सौर संवत्सर में चान्द्रमास के क्रम से प्रतिवर्ष 11 दिन अधिक हुआ करते हैं तो 2 वर्ष, 8 मास, 16 दिन, 4 घड़ी बीतने पर एक अधिमास बनता है। चैत्रादि मासों के साथ मेष आदि

संक्रान्तियाँ नियम से रहा करतीं हैं। इस अधिमास के साथ कोई भी संक्रान्ति नहीं रहती है, यह असंक्रान्तिमास ही रहता है।

ब्रह्मादि देवताओं ने कश्यप से कहा कि इस गणना से एक अधिमास बनता है। आप इसी अधिमास का स्वामी बनने के लिए मार्त्तण्ड का अभिषेक कीजिए। इतने समय तक जल में पड़े रहने से इसने बहुत कष्ट पाया है, इसलिए आपके 12 पुत्र अपने-अपने ही मास के अधिकारी बने रहेंगे, किन्तु यह मार्त्तण्ड किसी भी मास में मलमास का स्वामी बनकर रहेगा, हम यह वरदान इसको देते हैं।

यह इतिहास दक्ष मन्वन्तर का है, अर्थात् सतीसर को कश्यप मुनि द्वारा सुखाकर कश्मीर बनने के समय का है, इस बात की सत्यता तथा स्थिरता वेद, ब्राह्मण, पुराण, धर्मशास्त्र, ज्योतिष शास्त्र मुक्तकण्ठ होकर जतलाते हैं।

सर्वप्रथम वेद में मलमास का निर्देश -

1) मद्वौषधिगण में - मलिम्लुचोनामासि त्रयोदशमासः इन्द्रस्यसीन्द्रस्य

2) मार्त्तण्ड ब्राह्मण -

(क) यत् षोडशऋतून्तद्धोमाद्धोतव्यम् ।
यजेत ततस्तन्मलिम्लुचान्तम् ।।

(ख) स सत्यभामा सहितो रविस्तदेद्दक्षिणं तन्मलिम्लुचान्तम् ।

(ग) मलिम्लुचयामीति त्रयोदश एत-.....स त्रयोदश मासमेति ।

संप्रदायप्रदीपिका में दर्शाया गया श्रौतप्रमाण - (यह वहाँ के मलमास निर्णय में प्रमाण दिया गया है।)

तद्यस्यानियमको नाम मासोऽधिनामा अकालवेला स्फिरितो...... ...सौम्यः ।।

संप्रदायप्रदीपिका में मलमास-निर्णय -

तथा यत् षोडशऋतून्यजेत द्वात्रिंशत्पौर्णमासीरिष्ट्वा गार्हपत्यं

प्रीणाति तेन त्रयोदशमासाः संपद्यन्ते तेन पितरः प्रीणन्ति तस्मात्त्रयोदशमासाः संवत्सरः संवत्सरस्यापत्यै स एव मलिम्लुचः । -इति काठकीयश्रुतिः ।

अब पुराणों में मलमास का माहात्म्य -

मार्त्तण्ड माहात्म्य में

1) तत्र मलिम्लुचे मासि सूर्यक्षेत्रे पितृन्यजेत ।

2) श्राद्धं पिण्डप्रदानं च तत्रेव तु मलिम्लुचे ।

3) येषां श्राद्धे विरोधोऽस्ति पतितानां विशेषतः ।
सूर्यक्षेत्रे मले तेषां श्राद्धमदायतां व्रजेत ॥

4) मलिम्लुचेऽत्र यः कुर्यात्च्छ्रीविष्णुर्बलिपूर्वकम् ।

5) मलिम्लुचे सूर्यक्षेत्रे द्वादशी तु दिने दिने ।

6) तेषां मलिम्लुचे मासि सूर्यक्षेत्रे विशेषतः ।

7) मलिम्लुचस्तु तत्रान्ते कर्मसंपत्ति हेतवे ।

8) मलिम्लुचस्तु तत्रान्ते स्थाप्यो वै प्रेतमुक्तये ।

9) मलिम्लुचे त्वेक एव पञ्चकारणरूपधृत् ।

10) मलिम्लुचाधिपतिना सहितात्नरकारिणा ।

11) संक्रान्तिरहितो मासो मलमासस्ततोऽधिकः ।

इन प्रमाणों के अतिरिक्त और भी प्रमाण वहाँ मिलते हैं। यहाँ ग्यारह प्रमाण ही पर्याप्त हैं, अतः इतने ही दर्शाए गए हैं।

संप्रदायप्रदीपिका का कुछ विभाग मलमास का निर्णय करता है। वहाँ काठक गृह्यपरिशिष्ट, स्कन्द पुराण, ब्रह्माण्ड पुराण आदि प्रसिद्ध शास्त्र इसी मलमास की सिद्धि पर प्रमाण के रूप में जतलाए गए हैं तथा श्रौतप्रमाण भी इस प्रकार दिया गया है - (तथा च श्रुतिः) - तदास्यनियमको नाम मासोऽधिमासा नाम अकालवेला

इसका अर्थ भी वहाँ दर्शाया गया है - अधिमास्तु दर्शादिनियामक त्रितयाभावात् अनियामकता प्रकाशैव, अत एव अधिनामा चान्द्रादि व्यपदेश त्रयातिरेकादधिकः तथा च अकालवेला स्फिरितः कालस्य

ग्रीष्मादे: वेलाया: सूर्योदयादे: स्फिरिता स्थिरता नास्ति, असौम्य: सोमकलानां वृद्धिक्षयवशात् तिथिपञ्चदशकनियमेन शुक्लकृष्णोपलक्षितं प्रतिपदादितिथिशरणत्वमन्यमासेष्विव तत्र नास्ति। इति।।

प्रकारान्तर से और भी इसकी पुष्टि करता है-

(असौम्य: चन्द्रकलाक्षयवृद्धिहेतु: कृष्णशुक्लप्रतिपदादि) तिथिप्रार-म्भावश्यभावाभावात् कश्चनपर: चान्द्रादि मासव्यपदेश्या निरूपति:, मलिम्लु- चश्चौर (इव परगृहं प्रविष्ट: न केनापि रूपेण लक्षित: अकस्मान्निपतनशील अत एव) मलिम्लुचत्वं सार्थकम् ।।

अब इन दो स्थलों का भावानुवाद -

मास तीन प्रकार का बनता है यह नियम है, चान्द्र:, शुक्लादिदर्शान्त: सावनस्त्रिंशतदिनै: । एकराशौ रविर्यावत्कालं मास: स भास्कर: ।। अर्थात् शुक्लप्रतिपदा से अमावसी तक चान्द्रमास बनता है। और एकराशि में जब तक सूर्य रहेगा वह सौरमास बनता है। 30 दिनों से सावन मास बनता है। यह नियम है, तीनों मास इसी प्रकार से चलते हैं। कोई भी विपर्यय इनमें नहीं हो सकता। किन्तु अधिमास के लिए इन तीनों नियमों में से कोई भी नियम नहीं है। इसी कारण इसका नाम अधिमास है। वसन्त, ग्रीष्म आदि भी इसका नियम नहीं है। सूर्योदय, सूर्यास्त आदि भी इसका नियम नहीं है। अथवा चन्द्रमा की कलाओं का घटाव-बढ़ाव भी इसका नियम नहीं है। और मासों के प्रकार शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष नियम भी इस अधिमास को नहीं है। यह अधिमास और ही कोई है, इसके आने का कोई नियम भी नहीं है। चोर के प्रकार अकस्मात् आ पड़ता है। जैसे चोर किसी घर में घुस जाता है और किसी को भी पता नहीं लगता, उस मकान का सारा सामान तितर-बितर कर देता है एवं वहाँ उपद्रव मचाता है, इसी प्रकार यह मलिम्लुच अकस्मात् आकर सारी क्रिया का ह्रास या सत्यानाश कर देता है। उसी कारण इसका नाम मलिम्लुच या अधि मास है। वैसे भी संस्कृत में मलिम्लुच चोर का नाम है। हाँ इतनी बात

जरूर है कि इस मास में विष्णुबलि अथवा मार्त्तण्ड क्षेत्रश्राद्ध अथवा मार्त्तण्ड क्षेत्र में अन्नदानादि करना बहुत ही उत्तम है।

इसके बारे में संप्रदायप्रदीपिका में यह दर्शाया गया है "यदा तु शुक्लत्रयोदश्यां मलमासप्रवेश: स्यात्तदा तत्रातीतया द्वादश्या मलिम्लुचासत्वात्" इस प्रकरण से लेकर "पितृकर्मणे मलिम्लुचसतयामेवाव- श्यकरणीयस्य मलमासोत्तरकाले कथं निर्वाह:" यहाँ तक समाप्त होता है। इसका अर्थ -

द्वादशी अर्थात् नारायणबलि का विष्णुश्राद्ध शुक्लपक्ष की द्वादशी के दिन ही किया जाता है। जब मलमास शुक्ल त्रयोदशी पर ही लगेगा शुक्ल द्वादशी पर ही मलमास में एक विष्णुश्राद्ध अवश्य करने की आज्ञा शास्त्र बतलाता है, तो मलमास के बिना शुक्ल द्वादशी पर विष्णुबलि अथवा मलमासयुक्त त्रयोदशी पर विष्णुबलि कैसे किया जा सके?

यह धर्मशास्त्र का उद्धरण यहाँ इसलिए लिखा गया है कि मलमास का विष्णुबलि आदि कर्म के साथ कितना घनिष्ठ संबंध है और शास्त्रकारों ने भी कितने विस्तार से मलमास का कर्मकाण्ड के साथ घनिष्ठ संबंध होने का वर्णन किया है और कैसे-कैसे अनेक वैदिक, पौराणिक, स्मार्त, ज्योतिष युक्तियों से इस मलमास की पुष्टि की है।

विष्णुधर्मोत्तरे वरुणरामसंवादे प्रथमखण्डे द्वासप्ततितमोध्याये

1) सौरसंवत्सरस्यान्ते मासेन शशिजेन तु ।
एकादशातिरिच्यन्ते दिनानि भृगुनन्दन ।।

2) मासद्वये साष्टमासे दिनषोडशकान्विते ।
नाडीचतुष्टयान्ते तु तस्मामासोतिरिच्यते ।

धर्मसिन्धु भी इसी का आशय दर्शाता है -

1) द्वात्रिंशद्भिर्गतैर्मासैर्दिनै: षोडशाभिस्तथा ।
घटिकानां चतुष्केन संपतत्यधिमासक: ।।

वसिष्ट सिद्धान्त में भी यही प्रमाण–द्वात्रिंशद्भिर्गतैर्मासैरित्यादि दिया गया है।

अब यहाँ शंका होती है कि ऊपर के श्रौत प्रमाण में इस मलमास का अनियत समय अर्थात् कोई मास, ऋतु, वेला आदि नियम नहीं है, तो (द्वात्रिंशद्भिर्गतैर्मासैः) इस प्रमाण से 32 मास, 16 दिन, 4 घड़ी बीतने पर मलमास लगता है, तो क्या यह समय का नियम नहीं है?

रणवीर रत्नाकर में इसका समाधान -

एतत्तु संभवार्थ न तु नियमार्थ तेन न्यूनाधिककाले मलमासपातेऽपि नैव दोषः । यान्यपि मासे त्रिंशत्तमे भवेदित्यादीनि वचनानि तान्यपि संभवाभिप्रायेनैव न तु नियमाभिप्रायेण व्यभिचारस्य स्फुटत्वात् ॥

अर्थात् यह तो सम्भव के अभिप्राय से कहा गया है, नियम के अभिप्राय से नहीं क्योंकि इसका व्यभिचार अर्थात् 32 मास, 16 दिन आदि कोई नियम नहीं रहता, यह बात प्रकट है।

रणवीर रत्नाकर में मलमास अथवा अधिमास सविस्तर वर्णित है और प्रमाण के रूप में मदनरत्न, काठगृह्य, गार्ग्य स्मृति, विष्णुध र्मोत्तर आदि अनेक शास्त्र दिखलाए गए हैं। इतना ही नहीं ज्योतिषशास्त्रों के प्रमाण भी दिए गए हैं, जैसे - तदुक्तं ज्योतिषशास्त्रे रविना लङ्घितो मासश्चान्द्राख्यातो मलिम्लुचः ।

यह भी दिखलाया गया है कि मलमास को मलिम्लुच कहा जाता है। और भी, वहीं अत्राधिमासस्य ज्योतिषशास्त्रे संभवकाल उक्तः -

1) दिवसस्य हरत्यर्कः षष्टिभागमृतौ गतः
करोत्येकमहच्छेदं तथैवेकं च चन्द्रमा ।

2) एवमर्धतृतीयानां ....मार्धमासकम् ।

अस्यार्थः - दिवसस्याहोरात्रस्य तिथेर्वा षष्टिभागं दण्डात्मकं अर्कः प्रतिदिनं हरति न लङ्घयति अत ऋतौ षष्ट्यहोरात्रैः

षष्टिनाड्याकर्षणात्तिथिरेका सूर्येणाकृष्टा भवति । एवमिन्दुनापि। चन्द्रार्कभ्यां ऋतुं प्रतिदिनद्वयापकर्षणाद्वर्षेण द्वादशदिनानि लभ्यन्ते। एवं सार्धवर्षद्वयपर्यन्तेनाधिमासो लभ्यते। अयं नपुंसक इत्यपि समुक्तं ज्योतिः शास्त्रे।

इसका अर्थ - सूर्य रात और दिन का साठवां हिस्सा अर्थात् एक घड़ी नहीं लाङ्घता है, इसलिए साठ दिन व साठ रात्रियों से साठ घड़ियाँ बच जाने से एक तिथि सूर्य से निकल जाती है। इस कारण एक ऋतु को दोनों अर्थात् सूर्य व चन्द्रमा के खिंचाव से एक वर्ष में 12 दिन निकलते हैं, तो ढाई वर्ष में एक अधिमास प्राप्त होता है। ज्योतिषशास्त्र ने इस मास का नपुंसक नाम भी रखा है। और जो ऊपर 'द्वात्रिंशद्भिर्गतैर्मासैः' यह प्रमाण दिखलाया गया है, इसी सिद्धान्त का आशय प्रकट करता है। इसके अतिरिक्त भी वहाँ प्रकाश डाला गया है, पर यहाँ लिखने से ग्रंथ लंबा होने के कारण इतना ही रखा जाता है। कहने का आशय है कि ज्योतिष के सिद्धान्त ग्रन्थों में भी मलमास का विशद वर्णन हुआ है। ज्योतिष के आधार पर मृत्तितत्त्वकर्त्ता ने भी गणित द्वारा मलमास की सिद्धि दिखाई गई है। यहाँ तक कशमीर संप्रदाय सम्मत मलमास का निर्णय किया गया है।

भानुमास निर्णय

संप्रदायप्रदीपिका में - एकराशिगते सूर्ये यदा द्वयं भवेत वर्ष हव्यकव्यक्रियाहर्ता तदा ज्ञेयोऽधिमासकः ।

मृत्तितत्त्व में भानुमास लक्षण

यत्र एकराशिणे सूर्ये भवेद्दर्शद्वयं पुनः । सम्प्रतो भानुमासाख्यः सर्वकर्मसु गर्हितं।

ऊपर के दो प्रमाणों का अर्थ एक ही है। सूर्य के एक राशि में होने पर दो अमावस्याएँ आ जाएंगी, तो भानुमास होता है। जब दो संक्रान्तियाँ एक राशि में आ जाएंगी तो क्षयमास बन जाता है। जैसा कहा गया है- द्विसंक्रान्तिमासो क्षयाख्यः कदाचित् । इन दो संक्रान्तियों

में से पहले का नाम संसर्प्य व दूसरे का नाम अंहस्पति है।

संप्रदायप्रदीपिका और वृत्तरत्नाकर में कहा गया है -

संसर्प्योंहस्पतिराधिमास इत्येते त्रयोऽपि ज्योतिशास्त्रनिरूपिते विवाहादौ त्याज्या: ।। अर्थात् संसर्प्य, अंहस्पति, अधिमास ये तीनों निन्दा के योग्य हैं, तीनों में विवाहादि शुभकार्य नहीं करने चाहिए।

संसर्प्य और अंहस्पति, यों तो ये दोनों प्रख्यात नहीं हैं। मलमास और भानुमास दो विभागों में बाँटे गए हैं। अर्थात् इनका विभाजन दक्षिण और उत्तर में महर्षियों ने किया है। जैसे- संप्रदायप्रदीपिका में - पूर्णिमाद्यवसान: स्यान्मासे देवकृतस्तथा। दार्शान्तो मानुषो ह्येते विन्ध्यादुत्तरयाम्यगौ। इति महर्षिणा गर्गमुनिना विन्ध्योत्तरदेशे पूर्णिमान्तस्य चान्द्रत्वं व्यवस्थापितं, विन्ध्याद्दक्षिणदेशे तु दार्शान्तस्य ।

इसका आशय यह है कि मलमास विन्ध्यपर्वत से उत्तर भाग में रख दिया गया और विन्ध्यपर्वत से दक्षिण भाग में भानुमास रख दिया। विभाजन करने वाले महर्षि गर्ग हैं। इसी विभाजन की पुष्टि मृतितत्वकर्त्ता ने की है - हिमालयप्रदेशेऽपि यत्र कुत्रापि जन्मिन:। . ...मले मासि प्रोक्ता देव्यधिकारिणा:। विन्ध्यात्पूर्वाचलान्तं च दक्षिणान्तमुपाश्रिता:। संभूताश्च मया प्रोक्ता भानुमासधिकारिणा: ।। अर्थात् हिमालय के आस-पास रहने वाले मलमास के अधिकारी और विन्ध्यपर्वत के दक्षिण में रहने वाले भानुमास के अधिकारी हैं। यही कारण है कि कश्मीर और उसके आस-पास रहने वाले मलमासी हैं और विन्ध्यपर्वत से दक्षिण दिशा की ओर भानुमासी हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि जब महर्षियों द्वारा इसका विभाजन हुआ है तो कश्मीर में दोनों प्रकार के अर्थात् मलमासी और भानुमासी कैसे रहते हैं? इसका कारण है कि कभी बाहर से जनता, कश्मीर आई, अथवा कभी यहाँ से ही किसी उपद्रव के कारण भागकर शान्त समय होने पर यहाँ वापस आई इस कारण बाहर का देशाचार अर्थात् भानुमासी होना यहाँ भी प्रवर्तन में आया, जो आचरण आजतक चलता रहा है।

इस मास को अर्थात् मलमास और भानुमास को शास्त्रों ने शुभकार्य के लिए निषिद्ध रखा है किन्तु पितरों के लिए विशेषतः पतितों, कुकर्मियों के उद्धार के लिए उत्तम सिद्ध किया है। अतः इन दो मासों में पितरों का श्राद्ध आदि तथा पतितों के उद्धार निमित्त विष्णुबलि आदि मार्त्तण्ड क्षेत्र में करना, अनन्त फलप्रद बनता है अर्थात् उनका सम्पूर्ण उद्धार करने वाला हो जाता है। यह शास्त्रों में घोषित किया गया है।

भानुमास की महत्ता भारत में अन्य प्रकार से भी प्रचलित है। भारत में भानुमास को पुरुषोत्तम मास मानकर इस मास में सम्पूर्ण व्रत और गोलोकनाथ भगवान् श्रीकृष्ण का व्रत, पूजन, कथावाचन, दानधर्म आदि बहुत ही श्रद्धा से किया जाता है। इसका आधार पुरुषोत्तम माहात्म्य नामक ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ 31 अध्यायों में सम्पूर्ण हो जाता है। इस ग्रन्थ की श्लोक संख्या 1561 है। इसमें भी अधिमास को सर्वतः वर्ज्य बतलाया गया है – अधिमासः समुत्पन्नः कदिचित्पाण्डुनन्दन। तमूचुः सकला लोका असहायं जुगुप्सितम् । अनर्हो मलमासोऽयं रविसंक्रान्तिवर्जितः । अस्पृश्यो मलरूपत्वाच्छुभकर्मणि गर्हितः ।।

अर्थात् यह जो अधिमास है किसी समय लोगों ने इसकी निन्दा की कि इसको कोई नियम नहीं है, यह मलमास अनुचित है अर्थात् आदर के योग्य नहीं है, इसमें सूर्य का संक्रम भी नहीं है, इस कारण स्पर्श करने के योग्य नहीं है, अतः किसी भी शुभकार्य के योग्य नहीं है, इत्यादि।

आगे सातवें अध्याय में पुरुषोत्तम गोलोकनाथ इस मलमास को वरदान देते हैं – गुणैः कीर्त्यानुभावेन षड्भगैश्च पराक्रमैः भक्तानां वरदानेन गुणैरन्यैश्च मासकैः ।। अहमतैर्यथालोके प्रथितः पुरुषोत्तमः तथायमपि लोकेषु प्रथितः पुरुषोत्तमः ।। अस्मै समर्पिताः सर्वे ये गुणाः मयि संस्थिताः पुरुषोत्तमेति यन्नाम प्रथितं लोकवेदयोः ।। तदप्यस्मै मया दत्तं वस्तुतुष्टये जनार्दन अहमेवास्य संजातः स्वामी च मधुसूदन ।।

अर्थ - इस अधिमास में बहुत गुण होंगे। इस मास में जो भी भक्ति की जाएगी, वह उत्तम फल वाली रहेगी। जिस प्रकार मैं सर्वविख्यात पुरुषोत्तम हूँ, उसी प्रकार यह मास भी पुरुषोत्तम मास नाम वाला रहेगा। जो गुण मुझमें हैं, वे गुण इसमें भी रहेंगे। इसका महत्त्व वेदों और शास्त्रों में रहेगा। और मैं मधुसूदन ही इसका स्वामी रहूँगा। इसका और भी माहात्म्य वर्णित है। शास्त्र प्रमाण इस कारण दिया गया है कि भारत में इस अधिमास का नाम पुरुषोत्तम मास है। इस कारण भारत के आस्तिक लोग इस मास में और कुछ शुभकार्य नहीं करते हैं किन्तु निष्काम भास से ईश्वर उपासना अच्छी प्रकार करते हैं। इसी प्रकार कश्मीर में और कुछ शुभकार्य नहीं करते हैं, किन्तु पितरों की परातृप्ति के निमित्त श्राद्धादि और पतितों के उद्धार के निमित्त विष्णुबलि, सूर्यबलि और पितरों के श्राद्धादि तथा दान इत्यादि करते हैं। और सूर्यक्षेत्र यानि मार्त्तण्ड तीर्थ ही यह काम करने के लिए प्रधान और सफल तीर्थ है। ।।शिवम्।।

इति अधिमासनिर्णयः समाप्तः ।।

ग्रंथ रचयिता श्यामल्लाल जतू सुपुत्र नारायण जतू, कनिकदल श्रीनगर ।।

ऊपर के लेख का समन्वय

कश्मीर में समन्वय मार्त्तण्ड तीर्थ अति प्राचीन तथा प्रसिद्ध है। इस तीर्थ और इससे सम्बन्धित स्थानों और देवताओं का वर्णन मार्त्तण्ड माहात्म्य तथा अन्य शास्त्रों में सविस्तार किया गया है।

इस मार्त्तण्ड क्षेत्र की महत्ता समस्त भारत के कोने-कोने तक व्याप्त है और समस्त भारत के लोग पितरों का उद्धार करने के लिए कश्मीर में आकर इस तीर्थ पर श्राद्ध आदि तथा अनेक प्रकार के दान आदि बड़ी श्रद्धा से करते हैं। वैसे तो यह श्राद्धादि इस तीर्थ पर सर्वदा चलते रहते हैं, किन्तु जब कभी मलमास, भानुमास का समय आता है, तब बहुत ही संख्या में देश देशान्तरों से आस्तिक तथा श्रद्धावान् महाशय इस तीर्थ पर आकर अक्षय लाभ प्राप्त करते हैं।

निष्कर्ष यह निकलता है कि मलमास तथा भानुमास का प्रारम्भ तथा विकास इसी सतीसर अथवा कश्मीर में ही हुआ है और विशेष स्थान इसका मार्त्तण्ड क्षेत्र ही बना हुआ है। इस बात की पुष्टि वेद से लेकर साधारण शास्त्र तक सारे ग्रंथ करते आए हैं। इसी सतीसर अथवा कश्मीर में लाखों युगों से जनता बसती आयी है और तभी से मलमास और भानुमास को पतितों का उद्धार करने वाला मानती आई है। कश्मीर की जनता उसी आदिकाल से कर्मवीर, धर्मवीर, विद्यावीर, विचारशील, तपोनिष्ठ, आस्तिक और श्रद्धासम्पन्न है इसी कारण यहाँ की रीति दोनों मासों अर्थात् मलमास तथा भानुमास को मानती आई है। यहाँ तक कि अभी भी भारत में ब्रह्मचारी को यज्ञोपवीत डालने के समय कश्मीर की ओर सात कदम चलाकर ही यज्ञोपवीत डाला जाता है, इस विचार से कि यह ब्रह्मचारी कश्मीर के ब्रह्मचारी जैसा तपोविद्यादि गुण सम्पन्न हो।

"कश्मीरी पंचांगकर्त्ताओं ने आँखें मूंद कर तथा लकीर का फकीर बनकर आजतक मलमास को माना है", इसमें सत्यता नहीं है। "ज्योतिष का इस मलमास के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है", ऐसा

विचार निर्मूल है क्योंकि इस ग्रन्थ में मलमास को वेद प्रसिद्ध, ज्योतिष प्रसिद्ध, धर्मशास्त्र प्रसिद्ध, पुराण प्रसिद्ध, सत्संप्रदाय प्रसिद्ध करामलकवत् दर्शाया गया है। इस कारण मलमास पर ऐसा विरुद्ध जल्पवाद आकाश को थूकने के समान दुस्साहस है।

निवेदन - श्री प्रेमनाथ ज्योतिषी ने जो 5053 की जन्त्री में मलमास के विरुद्ध अपना निर्मूल जल्पवाद लिखकर, जनता में अंधेरा फैलाया था, जनता को उस अंधेरे से बचाने के लिए इस ग्रन्थ में प्रति शब्द वैदिक, ज्योतिष, पौराणिक, धर्मशास्त्रीय प्रमाणों से प्रमाणित सन्मार्ग सिद्धान्त दिखलाया गया है। मैं पूरी आशा रखूँ कि जनता इस ग्रन्थ को आरम्भ से समाप्ति तक पढें जिससे सत्य प्रकाश प्राप्त हो। शिवम् ।।

लेखक - नारायण जतू का पुत्र श्यामलाल जतू
संवत् 5060 चैत्र शुक्ल त्रयोदशी
(मार्च-अप्रैल, 1985)

TRANSLATION

According to astrological tradition, the *malamāsa* occurs after every two and a half years. The year is divided into twelve months and the extra time is calculated, accumulated and determined as the *malamāsa* or inter-calary month. This is also known as *adhimāsa* or *puruṣottamamāsa*. How it is formed shall be discussed in the following pages. This is considered as the *mala* (filth) of the festive period and hence in this month all the religious ceremonies are observed. Of course, in this duration in Sūryakṣetra (Mattan, Bhavan) the homages to the ancestors are paid. This month is considered special for doing these rituals.

The importance of rituals is diminishing in the Hindu society day-by-day. The society is turing insensitive towards this aspect of religion. The pundits who were engaged in the performance of rituals were finding it difficult to make the two ends meet. Consequently they renounced this *kriyāmārga* (path of religious rites) though reluctantly. It suited them but at the same time it was a great blow to the *mārga*. Hence if was thought as appropriate to record some informations regarding this *kriyāmārga* so that this might be useful ; the day this tradition is revived and hence it is being jotted down.

How and when this *malamāsa* originated is described in the *Mārtaṇḍa Brāhmaṇa* and *Mārtaṇḍa Māhātyma*. *Mārtaṇḍa Brāhmaṇa* says :- *tadbrahmaṇo yaṁ ṛṣiputraḥ-------bhīti* etc. and *Mārtaṇḍa Māhātmya* says :- *mārtāṇḍeti kathaṁ------mānuṣe loke* etc.

(Both these instances refer to the same history which is briefly given below)

In the Dakṣa *manvantara* (age of Manu) Aditi the daughter of Dakṣa prajāpati and wife of sage Kaśyapa bore thirteen offsprings. These initialy were in the form of eggs. Of these twelve eggs produced twelve suns and subsequently the *kālacakra* (or cycle of time) comprising twelve months, six seasons and two paths (*Uttarāyaṇa & Dakṣiṇāyana*) and waxing and waning of moon was formed.

Seeing the thirteenth egg impotent, the mother Aditi abandoned it in the Satisara. The sage Kaśyapa thought of having an *āśrama* (hermitage) in the same place, i. e. Śatīsara. He worshipped the trinity of gods viz Brahmā, Viṣṇu and Śiva for fruition of his objective, and Viṣṇu cut the western mountain of Satīsara with his discus making way for the water of Satīsara to flow away. With the passing of time, Satīsara got dried up and land emerged. Kaśyapa established all the holy places of India here. People started living here. In some deep portion of Satīsara, water remained stored along with the egg thrown by Aditi.

Sage Kaśyapa saw the egg and he tried to hold it and no sooner did he held it, it broke, giving way to a great flame, which hit the mountain top of Mārtaṇḍa area. This was named as Bhargaśikhā (the plume of the Sun) Bharga is one of the names of the sun god. There exists even today temple dedicated to goddess Bhargasikhā. People often worship here, offer gifts and find solace. The area of Mārtaṇḍa is known as Mārtaṇḍa, Mattan or Bhavan. This is situated six miles north-east from Anantnag. This is surrounded by many

a temples and holy places which are detailed in the *Mārtaṇḍa Māhātmya*.

Relating once again to the sage Kaśyapa; whatever remained of that great flame in the egg was named as Mārtaṇḍa or the luminous god from the impotent egg. Sage Kaśyapa saw the remaining flame (Mārtaṇḍa) and astonished, he sought refuge in Brahmā. Brahmā consoled him saying, "O son! Don't be surprised! This is your son only.......etc."

Then Kaśyapa asked Brahmā, "The cycle of time is governed by my twelve issues. May this thirteenth of mine be alloted something similar." Brahmā sought Viṣṇu's help in this matter who in turn remembered Śiva. Taking cue from Viṣṇu, Śiva let the matter go stating that matter shall be discussed with the twelve suns and when the twelve suns were consulted on this matter by all the gods, they said, "Having measured the time, destiny already has alloted our jobs to us and accordingly we all are moving this wheel of time. Now, it is for you to see how any alteration is made in this schedule or if you see any extra time in our schedule, Mārtaṇḍa should be made its proprieter."

References from *Mārtaṇḍa Māhātmya* are given below in support:-

tadā prabṛti tadbrahmasiddhānta darśanakramāt/
saura saṁvatsarasyānte māsena śaśijena tu//

ekādaśātiricyante dināni prativatsaram/

varṣadvaye cāṣṭamāse dinaṣoḍaśakānvite//
nāḍī catuṣṭayānte ca patatyekodhimāsakaḥ/
cāndrāścaitrādaya māsā yuktā meṣādisaṁkramaiḥ//
saṁkrāntirahito māso malamāsastatodhikaḥ/ evaṁ

vicārya brahmādya devendrāḥ kaśyapaṁ tadā//

abruvanadhimāsesmin mārtāṇḍamabhiṣicyatām/

cirakālaṁ yatoṅena bhuktā sarasiyātanā//

These verses mean :- Hearing this from the twelve suns, the gods on the basis of *Brahmasiddhānta* (the first treatise of astrology), calculated and observed that in the solar year, every year there are eleven days extra as per the lunar month and after every two years, eight months, sixteen days and four *ghaṭīs* (24 minutes) an extra month is formed. The *saṁkrānti* (transition) by rule are associated with eight months like *Caitra* etc. There is no *saṁkrānti* (transition) in this *adhimāsa* and hence it remains without one.

Then Brahmā etc. told Kaśyapa that thus the *adhimāsa* is formed. You may designate Mārtaṇḍa as its proprieter. He has suffered a lot in the water for so long. Hence all the other twelve offsprings of yours continue to be the proprieters of their own months and this Mārtaṇḍa shall be the proprieter of the *malamāsa* everafter. We bless him.

This history dates back to the Dakṣa *manvantara* i. e, when Kaśyapa made Satīsara to dry and Kashmir evolved. This is authenticated by the Vedas, the *Purāṇas,* the *Brāhmaṇas*, the *dharmaśāstras* and the *jyotiṣa*.

First of all in the veda :-

1) In *madvaouṣadhigaṇa: malimluconāmāsi trayodaśamāsaḥ.......*
2) in *Mārtaṇḍa Brāhmaṇa* -

a) *yat ṣodaśaṛtūnantadhomādhotavyaṁ yajeta tatastanmalimlucāntaṁ*

b) *sa satyabhāmā sahito ravistadetaddaksiṇaṁ tanmalimlucāntaṁ/*

c) *malimlucayāmiti trayodaśa etan.....sa trayodaśamāsameti/*

In *Saṁpradāyapradīpikā* this reference is quoted regarding *malamāsa* :- *tadyasyāniyamko nāma māsodhināma-----soumyaḥ // tathā yat ṣ oḍaśaṛtūnyajeta dvātriśatpaurṇamāsīriṣṭvā gārpatyaṁ prīṇāti tena trayodaśamāsāḥ saṁpadyante tena pitaraḥ prīṇānti tasmāttrayodaśamāsāḥ saṁvatsaraḥ saṁvatsaras-yāpatya sa eva malimlucaḥ / - iti kāṭ hakīya ṣruti*

Now, the significance of *malamāsa* in the *Purāṇas* :-

1. *tatra malimluca māsi sūryakṣetre pitṛnyajeta/*
2. *śrāddhaṁ piṇḍapradānam ca tatreva tu malimluce /*
3. *yeṣāṁ śrāddhe virodho asti patitānāṁ viśeṣataḥ sūryakṣetre male teṣāṁ śrāddhamadāyataṁ vrajeta /*
4. *malimluce atra yaḥ kuryāt srīviṣṇubalipūrvakam /*
5. *malimluce sūryakṣetre dvādaśī tu dine dine /*
6. *teṣāṁ malimluce māsi sūryakṣetre viśeṣataḥ /*
7. *malimlucastu tatrānte karmasampatti hetave /*
8. *malimlucastu tatrānte sthāpyo vai pretamuktaye /*
9. *malimluce tveka eva pañcakāraṇa rūpadhṛt /*
10. *malimlucādhipatinā sahitānnakāriṇā /*
11. *saṅkrāntirahito maso malamāsastato adhikaḥ /*

There are several other references too but here these eleven would suffice.

Saṁpradāyapradīpikā deals with *malamāsa* at greater length. It quotes references from *Kāṭhakagṛhya*

pariśiṣṭa, Skandapurāṇa, Brahmāṇḍapurāṇa etc. regarding *malamāsa*. It says -

tathā ca śrutiḥ - tadāsyaniyamako nāma māsodhimāsā nāma akālavelā sphiratotyasoumyaḥ iti/ /and this is explained as :-

adhimāsastu darśādiniyāmaka tritayābhāvāt aniyāmakatā prakāśaiva ata eva adhināmā cāndrādi vyapadeśa trayātirekādhikaḥ, tathā ca akālavelā sphiritaḥ kālasya grīṣmādeḥ velāyāḥ sūryodayādeḥ sphiritā kālasya nāsti asoumyaḥ somakalānāṁ vṛddhikṣ ayavaśāt tithipañcadaśaka niyamena śukla kṛṣṇapakṣ itaṁ pratipadādi tithi śaraṇatvamanya māseṣviva tatra nāsti //iti//

It also states :-

asoumyaḥ candrakalā kṣayavṛddhihetu-kṛṣṇaśuklapratipadādititthi prārambhāvaśyabhāv-ābhāvāt, kaścanaparaḥ cāndrādimāsavyapadeśya nirūpitaḥ malimlucaścaura iva paragṛhaṁ praviṣṭaḥ na kenāpi rūpeṇa lakṣitaḥ akasmānnipatanaśīlaḥ ata eva malimlucatvaṁ sārthakam //

Now, for the traslation of the above :-

According to rules there are three ways in which the month is formed, e. g. *cāndraḥ śuklādidarśāntaḥ sāvanastriṁśatadinaiḥ ekrāśau raviryāvatkālam māsaḥ sa bhāskaraḥ* / i. e; from *śuklapratipadā* to *amāvasī*, the *cāndramāsa* (the lunar month is formed), and till the time, the sun is in a particular *rāśi* (constellation) gives rise to a *sauramāsa*. A *sāvana māsa* is formed of 30 days. These three months go on like this without any change or alteration. But for *adhimāsa* there is no rule, and hence its called

adhimāsa. Seasons like spring, summer etc. are no rule for it. The sunrise or sunset also does not rule it, neither the waxing and waning of moon, and nor the *śukla* or *kṛṣṇa pakṣa* (the bright and the dark for nights) of the month govern it. This *adhimāsa* is somewhat strange. There is no rule of its arrival. It enters like a thief. As a thief barges into a house un noticed and disturbs the entire house likewise this *adhimāsa* (or *malimluca*) suddenly occurs and disturbs the entire *kriyā* (rituals). Hence the name *malimluca* which in Sanskrit means a thief. However, in this month, it is considered auspicious to perform *Viṣṇubali* or oblations in or poor-feeding in Mārtaṇḍa kṣetra.

Saṁpradāyapradīpikā states the following portion in this regard :-

yadā tu śukla trayodaśyāṁ malamāsa praveśaḥ syāt tadā tatrātītāyā dvādaśyā malimlucāsatvat tu pitṛkarmaṇe malimlucasattayāmevāvaśya karaṇīyasya malamāsottarakāle kathaṁ nirvāḥ.

The oblation to Viṣṇu is performed on the twelfth day of bright fortnight only. If the *malamāsa* would occur on the thirteenth day of bright fortnight and the scriptures ordain that the oblation to Viṣṇu must be carried out on the twelfth day, then how come one can perform *Viṣṇubali* on bright twelfth day, which is without *malamāsa* or on the thirteenth day which is in *malamāsa* (but not the prescribed twelfth) ?

This scriptural reference is quoted here just to exemplify the closeness of the *Viṣṇubali* with the *malamāsa* and how extensively the writers of scriptures have demonstrated the close connection of rituals with the *malamāsa*. *Malamāsa* has been authenticated by

various vedic,puranic, *smārta* and *jyotiṣa* references :
In *Viṣṇudharmottarapurāṇa* :-

saurasaṁvatsarasyānte māsena śaśijena tu /
ekādaśātiricyante dināni bhṛgunandana //
māsadvaye sāṣṭamāse dina ṣodaśakānvite /
nāḍi catuṣṭayānte tu tasmānmāsotiricyate //

The *Dharmasindhu* also states :-

dvātriṁśadbhirgataimāsairdinaiḥ roḍaśabhistathā /
ghaṭikānāṁ catuṣkena saṁpatatyadhimāsakaḥ //

The *Vasiṣṭhasiddhānta* also states :- *dvātriṁśa-dbhirgatairmāsai*--- etc.

Now the question arises that as this *malamāsa* has been described as above all rules, then with this evidence (i. e. the *malamāsa* occurs after every 32 months, 16 days and 4 *ghaṭis*), is it not being governed by the rule of time ?

The *RaṇavīraRatnākara* provides the solution :- *etattu saṁbhavārthaṁ na tu niyamārthaṁ tena nyūnādhikakāle malamāsapātepi naiva doṣaḥ/ yānyopi māse triṁśattame bhavedityādinivacanāni tānyapi saṁbhavābhiprāyenaiva na tu niyamābhiprāyeṇa vyabhicārasya sphuṭatvāt* ; i. e. this has been stated for the sake of its occurance and not for the sake of any rule because its violation i. e. 32 months, 16 days etc. does not exist.

In this text, *malamāsa* is discussed in great detail and several texts like *Madanratna*, *Kāṭhagṛhya*, *Gārgya Smṛti*, *Viṣṇudharmottara* etc. are quoted as evidences. e.g. - *taduktaṁ jyotisaśāstre ravinā laṅghito māsaścāndrākhyāto malimlucaḥ* this is also shown that

adhimāsa is called *malimluca*. It also states :-

atrādhimāsasya jyotiṣaśāstre saṁbhavakāle uktaḥ

1. *divasasya haratyarkaḥ ṣaṣṭibhāgamṛtau gataḥ / karotyekaṁ ahacchedaṁ tathaivekaṁ ca candramā//*

2. *evamardhatṛtiyānāṁ.....mārdhamāsakam /* i. e. *divasasyāhorātrasya tithervā ṣaṣṭibhāgaṁ daṇḍātmakaṁ arkaḥ pratidinaṁ harati na laṅghayati atarṭau ṣaṣṭyahorātrai ṣaṣṭi nāḍyākarṣanāttithir sūryeṇākṛṣṭā bhavati/ evamindunāpi /candrārkabhyāṁ ṛtuṁ pratidina dvayāpakarṣaṇādvarṣeṇa dvādaśa dināni labhyante / evaṁ sārdhavarṣ advayaparyantenādhimāso labhyate /ayaṁ napuṁsaka ityapi samuktaṁ jyotiḥ śāstre /*

Its meaning :- the sun does not cover the sixtieth part of the night and the day and hence sixty *ghaṭis* get accumulated from sixty nights and sixty days giving way to one *tithi* (day). Thus in a year twelve days are formed and in two and a half years an extra month *(adhimāsa)* is formed. The *jyotiṣaśāstra* also refers to this month as *napuṁsaka* (neutral). (The a fore-mentioned evidence) "dvātriṁśadbhirgatairmāsaiḥ" also clarities it. There is enough light available there in this text on *adhimāsa* but due to paucity of space only the important portions are mentioned here. A lot has also been discussed in the same regard in the major astrological texts. The *mṛtitattvakartā* has proven the *malamāsa* through *gaṇiṭa* (mathematics). So far, the *malamāsa* has been discussed us per the Kashmir school of astrology.

Bhānumāsa nirṇaya

(the determination of solar month)

In *Saṁpradāyapradīpikā* :- *ekarāśigate sūrye yadā varṣadvayaṁ bhaveta havyakravyakriyāhartā tadā jñeyodhimāsakaḥ.*

Mṛtitattva states :- *yatra ekarāśiṇe sūrye bhaved-varṣadvayaṁ punaḥ/ samprato bhānumāsākhyaḥ sarvakarmasu garhitaṁ //* Both these references mean the same. When two *saṁkrāntis* (transitions) occur while the sun is in one *rāśi* (constellation) the *kṣayamāsa* happens. As it is said- *dvisaṁkrāntimāso kṣayākhyaḥ kadācit*. Of these two *saṁkrāntis* the first one is called the *saṁsarpya* and the other is called *aṁhaspati*.

It is mentioned in the *Saṁpradāyapradīpikā* and *Raṇavīra Ratnākara* that *saṁsarpyorhaṁspatir-ādhimāsa ityete trayopi jyotiśāstra nirūpite vivāhādau tyājyāḥ*, which means all the three *saṁsarpya*, *aṁhaspati* and *adhimāsa* are condemnable and auspicious rites like marriage etc. should not be performed in these months. (Although *saṁsarpya* and *aṁhaspati* are not so famous), the *malamāsa* and the *bhānumāsa* are divided into two divisions i. e, the sages have divided them into north and south is mentioned in *Saṁpradāyapradīpikā* :-

pūrṇirmādyavasānaḥ syānmāse devakṛtastathā/ dārśānto mānuṣo hyetau viṅdhyāduttara yāmyagau / iti maharṣiṇā gargamuninā viṅdhyottaradeśe pūrṇimāntasya cāndratvaṁ vyavasthāpitaṁ viṇdhyāddakṣiṇedeśe tu dārśāntasya. i. e, the sage Garga installed the *malamāsa* on the northern side of the Vindhya

mountain and placed the *bhānumāsa* on its southern side. The *Mṛtitattvakartā* also authenticates this division. *himālayapradeśepi yatra kutrāpi janminaḥ/ .... male māsi proktā devyadhikāriṇaḥ/ viṅdhyātpūrvācatāntaṁ ca dakṣiṇāntamupāśritāḥ saṁbhūtāśca mayā proktā bhānumāsadhikariṇāḥ//* i. e, people residing in the Himalayan region are entitled to the *malamāsa* and those residing in the regions to the south of the mountain Vindhya are entitled to the *bhānumāsa*. That is the reason for the corressponding faiths of both the regions.

Now the question arises that if there exist such a division then how come in Kashmir the followers of both systems (i. e, *malamāsa* and *bhānumāsa*) reside ? The reason for this is that people have migrated to Kashmir from other regions or some people have migrated from Kashmir to other regions (because of some disturbances) and have returned when the circumstances became normal. Thus the *deśācāra* (customs) of the other regions (i. e; being a follower of *bhānumāsa*) came into being here (in Kashmir) which is continued till date.

Scriptures declare both these month (i. e; the *malamāsa* and the *bhānumāsa*) as unfavourable for any auspicious deeds but as extremely favourable for the performance of oblations for the ancestors, specially who have been notorious or sinners. In these two months there performances done in Mārtaṇḍakṣetra is considered as highly beneficial for them.

The *bhānumāsa* is significant otherwise also. This month is treated as the *puruṣottamamāsa* and throughout in this month, Lord Kṛṣṇa is worshipped

and extensive fasting, praying, story-telling and charity done, reverentially. This entire procedure is based on a treatise called *Puruṣottama Māhātmya*, which is a thirty one chapter long book, comprising 1561 *ślokas* (verses). Here also, the *adhimāsa* is completely rejected :- *adhimāsaḥ samutpannaḥ katicitpāṇḍunandana tamūcuḥ sakalā lokā asahāyam anarho malamāsoyaṁ ravisaṁkrāntivarjitaḥ /aspṛśyo malakarmaṇi garhitaḥ//* i. e; the *malamāsa* was once rebuked by everybody that as it has no rules/ regulations, it does not deserve to be revered; as there is no *saṁkrāti* of Sūrya in it, it does not deserve to be touched even-----it is unauspicious etc.

But in the seventh chapter of the same book the Lord blesses *malamāsa*-

guṇaiḥ kīrtyānubhāvena ṣaḍbhagaiśca parākramaiḥ/

bhaktānām vardānena guṇair. anyaiḥś ca māsakaiḥ//

ahaṁ eter yathā loke prathitaḥ puruṣottamaḥ/

tathā yama pi loke prathitaḥ puruṣottamaḥ//

asmaiḥ samarpitāḥ sarve ye guṇāh mayi saṁsthitāḥ/ puruṣottam eti yannāma prathitaṁ lokavedayaḥ// tadapyasmai mayā dattaṁ......

i.e. all the devotional performances will yield great results. This month shall be named after me as *Puruṣ-ottama* and it would be having similar qualities as those of mine. Its significance shall be described in the Vedas and scriptures and it shall be governed by me. There are other references to its significance as well. This reference is quoted here because this

adhimāsa is known as the *Puruṣottamamāsa* and hence no auspicious rituals are observed during this month but people do worship god with a lot of devotion. Likewise in Kashmir also there are no rituals undertaken in these days, only oblations to the ancestors and *Viṣṇubali, Sūryabali* and charity for the sake of emancipation of sinners and the best place to perform these rituals is Sūryekṣetra or Mārtaṇḍa. //*śivaṁ*//

Thus ends *adhimāsanirṇayaḥ* by Shyamalal Jatoo s/o Narayana Jatoo, Kanikadal, Srinagar.

EPILOGUE

Mārtaṇḍa is one of the holiest and most famous places of pilgrimage in Kashmir. This place along with other related places and gods are described in detail in texts like *Mārtaṇḍa Brāhmaṇa* and *Mārtaṇḍa Māhātmya*. The area of Mārtaṇḍa is of great religious significance and people from all over India visit here in order to perform oblations for their ancestors and for charity. Though these performances are observed here throughout the year but during the period of *malamāsa/ bhānumāsa* a lot of devotees from around the globe visit here and get benefitted.

Hence we can conclude that the *malamāsa* and the *bhānumāsa* originated and flourished here in Satīsara (Kashmir) and Martaṇḍa kṣetra has been and still continues to be the focal point of this. Inhabitants of Kashmir have been living here and has held both these months as the emancipators of sinners.

The people of Kashmir have been labourious, religious, knowledgeable, contemplative, austere, believers and devout and hence the tradition here shows equal respect to both these months (i. e; the *malamāsa* and the *bhānumāsa*). This is highlighted by the fact that in other parts of India, a brahmacārin, at the time of his baptization, walks seven steps towards Kashmir after having the *yajñopavīta* (sacred thread), so that he may imbibe the qualities of a Kashmir brahmacārin.

"The Kashmiri astrologers have blindly followed the *malamāsa*"--is a false statement. It is baseless to assume that astrology has nothing to do with *malamāsa* because this monograph proves it to be quoted in the

vedas, *jyotiṣa*, *dharmaśāstras* and *purāṇas*. Hence these kind of allegations on the *malamāsa* are highly objectionable.

Request :- In his *pañcāṅga* of 5053, Pt. Premnath had tried to mislead the people by writing baseless things about the *malamāsa*. In this monograph, an attempt is made to save people from this darkness and the occurance of the *malamāsa* is proven by evidences from vedic, puranic, astrological and scriptural texts. I sincerely hope that this may be read from the beginning to the end so that the truth may prevail.// *śivaṁ*//

Shyam Lal Jatoo
s/o Narayan Jatoo
saṁvat 5060 *caitra śukla trayodaśī*
(March-April, 1985)